नवद्वीप से यात्रा विभ्राट

स्वामी शंकरानन्द और मैं सामान लेकर जब घाट किनारे आये तब एक नाव को छोड़कर बाकी गायब थे । सुना कि सारी नौकाओं को लेकर माँ स्टेशन घाट की ओर चली गयी हैं । हमारी नाव भी चल पड़ी । जाड़े का कोहरा पानी में उतर रहा था । चारों ओर अंधकार बढ़ रहा था । सामने कुछ साफ दिखाई नहीं दे रहा था। दूर से माँ के नाव की आवाजें आ रही थीं । कुछ देर चलने के बाद हम माँ के साथ हो गये । बगल की नौका से अपनी दोनों लड़कियों को अपनी नाव पर चढ़ा लिया । मेरी पत्नी किस नाव पर है, यह पता नहीं चला । सोचा, घाट पर पहुँचने पर सब मिल जायेंगे ।

नौकाएँ जब घाट किनारे आकर लगीं तो देखा–काफी धूमधाम है । बाद में पता लगा कि गौड़ीय मठ के प्रतिष्ठाता भक्ति सिद्धान्त सरस्वती महाराज का देहान्त हो गया है । उन्हें समाधि देने के लिए कलकत्ता से नवद्वीप लाया गया है । इसीलिए इतनी धूमधाम है । अस्तु नाव किनारे लगते ही स्वामी शंकरानन्द जी महिलाओं को माँ से मिलाने के लिए ले गये । मैंने स्टेशन के कुलियों को बोझा देकर स्टेशन की ओर रवाना कर दिया । इसके बाद श्री श्री माँ के समीप चल पड़ा। शंकरानन्दजी मुझसे पांच–सात मिनट पहले रवाना हो चुके थे । लेकिन वे किधर चले गये, इस अन्धेरे में पता नहीं चला । घाट की ओर आने पर एक भी नाव दिखाई नहीं दी । लड़कियों का नाम लेकर देर तक पुकारता रहा । किसी ओर से कोई आवाज नहीं आयी । पत्नी कहां है, लड़कियां कहां हैं और स्वयं माँ कहां हैं, कुछ पता नहीं चल रहा था । मन ही मन झुँझला उठा । चारों ओर घन अन्धकार था । स्टेशन किधर है यह भी पता नहीं । एक व्यक्ति से पूछकर चलने लगा । कुछ देर बाद स्टेशन आ गया । लेकिन यहां एक भी परिचित शक्ल दिखाई नहीं दी । सोचा–यह कैसी मुसीबत ? प्लेटफार्म

पर हम लोगों का सामान जरूर रखा हुआ था, पर अपने साथियों में से किसी को नहीं देखा । समझते देर नहीं लगी कि कुली सामान रखकर चला गया । मैं पुनः घाट की ओर चल पड़ा । लौटते समय ऐसा लगा जैसे रास्ता लम्बा है । अन्धेरे में चलने के कारण दो बार गिरते-गिरते बचा । अचानक अन्धेरे में शची बाबू से मुलाकात हो गई । उन्होंने पूछा-"आपकी पत्नी कहां है ?"

मैं-मुझे कुछ नहीं मालूम । पत्नी कहां है, लड़कियां कहां हैं, कोई पता नहीं ।

शची बाबू-आपकी लड़कियां तो माँ के पास हैं, पर आपकी पत्नी कहां चली गयीं ?

शची बाबू को पाकर ढाढ़स बँधी । उनके साथ माँ की नाव पर वापस आया । शची बाबू ने मेरी पत्नी के बारे में पूछा ।

माँ ने कहा-"माताजी गलती से धर्मशाला वापस गयी हैं । शंकरानन्द उन्हें लाने गये हैं ।"

शची बाबू-ठीक वक्त पर आ जायेंगी, क्योंकि अब ज्यादा वक्त नहीं है ।

माँ-"तुम स्टेशन चले जाओ । अगर इस बीच वे लोग आ गये तो स्टेशन चले जायेंगे । अगर ये लोग गाड़ी छूटने के पहले तक न पहुँच पायें तो तुम विमला माँ को गाड़ी पर बैठाकर पिताजी (अर्थात् मेरा) का सामान लेते आना ।"

मैंने सोचा कि शची बाबू जैसे गणमान्य व्यक्ति मेरा बोझ उठायेंगे और मैं नाव पर आराम करता रहूँ, यह ठीक नहीं है ।

मैंने माँ से कहा-"माँ, मैं शची बाबू के साथ जाऊँ ?"

माँ ने कहा-"तुम्हें जाने की जरूरत नहीं । शची बाबू तुम्हारा सामान लेते आयेंगे ।"

शची बाबू को अकेला जाते देखकर मेरा मन उनके साथ जाने को हुआ । मैंने माँ से कहा–"शची बाबू मेरा बोझा क्यों ढोयेंगे । इससे अच्छा है कि मैं चला जाऊँ ।"

माँ ने पुनः दृढ़कण्ठ से कहा–"नहीं, तुम जहाँ बैठे हो, वहीं बैठे रहो ।"

माँ के कण्ठस्वर को सुनकर मेरा चैतन्य वापस लौटा । सोचा, शायद मुझ पर कोई आफत आने वाली है, इसीलिए माँ दृढ़ता से मना कर रही हैं । अभी कुछ देर पहले किस परेशानी में फँसा था, उसका स्मरण करते ही सिहर उठा । प्रत्युत्तर दिये बिना चुपचाप बैठा रहा। माँ ने मेरी लड़कियों से कहा कि ओस गिर रही है । तुम सब छाजन के भीतर चले जाओ । हम लोग अन्धेरे में बैठे स्वामी शंकरानन्दजी के आने का इन्तजार करने लगे ।

कुछ देर बाद शंकरानन्द स्वामी की आवाज सुनाई दी । तब तक गाड़ी चली गई थी ।"

स्वामीजी पास आकर बोले–"जल्दी से एक धोती दीजिये । अमूल्य बाबू की पत्नी पानी में गिर गई थीं ।"

तभी माँ की नाव पर मेरी पत्नी की आवाज सुनाई दी । घटना समझ में नहीं आ रही थी । माँ ने मेरी पत्नी को एक धोती देने को कहा । सभी लोग बक्स में धोती खोजने लगे । लेकिन धोती नहीं मिली।

मैंने कहा–"शची बाबू मेरा बक्सा लाने गये हैं । उनके आने पर मैं धोती दूँगा ।"

कुछ देर बाद शची बाबू आये । मैंने साड़ी निकाल कर दे दी। बाद में पत्नी की जबानी सम्पूर्ण घटना का विवरण प्राप्त हुआ ।

शंकरानन्दजी मेरी पत्नी की तलाश में गये तो वह नौका मिल गई। उस नाव पर मेरी पत्नी के आलावा बेबी दीदी और प्राणकुमार बाबू की पत्नी थीं । हम लोगों की नावें जहाँ बँधी हुई थीं, उससे कुछ दूर जब उनकी नाव आई तब जल्दी से उतरते समय अचानक पानी में गिर गई । अधिक पानी न रहने के कारण वह डूब नहीं सकी । उसे गिरते देख बेबी दीदी और प्राणकुमार बाबू की पत्नी चिल्ला उठीं । इस चीत्कार की बिना परवाह किये मेरी पत्नी तुरत दौड़कर माँ की नाव के पास आकर बोलीं–''माँ, मैं पानी में गिर गई थी।''

यह सुनकर माँ ने कहा–''यह बात तो मैं इशारे से खुकुनी को बता चूकी हूँ । अच्छा, यह बताओ कि तुम्हारे मन में कैसी भावना उत्पन्न हुई थी ?''

मेरी पत्नी ने कहा–''उस दिन देवालय दर्शन करने जाते समय अन्यमनस्क भाव में आपके पैर पर मेरा पैर चढ़ गया था । तभी से मैं डरती रही कि अब मेरा बचना कठिन है । मैं नवद्वीप में ही रह जाऊँगी। जब गंगा में आकर नाव पर चढ़ती तब यही भाव मेरे मन में जाग उठता था । आज भी नाव पर बैठे–बैठे यही भावना उत्पन्न हुई थी कि आज मैं गंगा में रह जाऊँगी । सभी नाव से किनारे चले जायेंगे । सिर्फ मैं गंगा में रह जाऊँगी ।''

माँ–''आज सवेरे उठकर देखा कि माताजी (मेरी पत्नी) के बाल बिखरे हैं और आँखों में भय है, उसी हालत में मेरी ओर दौड़ी हुई आ रही हैं । माताजी की ऐसी मूर्ति कभी देखी ही नहीं थी । खुकुनी को यह बताती रही, पर वह समझ नहीं पाई ।''

यह भी सुना कि आज माँ बराबर मेरी पत्नी की तलाश करती रहीं और बार–बार खुकुनी दीदी से कहती रहीं–''उसे (मेरी पत्नी को) मेरे आस–पास रहने को कहो ।''

आज बड़ालघाट से नाव पर हमें सवार होने से लेकर रेती तक आने तक माँ हम लोगों की नाव पर थीं, इसलिए लोकलज्जा के कारण मेरी पत्नी माँ के निकट नहीं आयीं । यह सब सुनकर मेरे मन में यह धारणा उत्पन्न हुई कि माँ ने आज एक विषम विपद से मेरी रक्षा की है । यहाँ तक कि मेरी पत्नी के मृत्युयोग खण्डन करने के लिए हम लोगों को ढ़ाका से बुलवाया हैं । अभी कुछ देर पहले माँ के प्रति झुँझला उठा था । उसे सोचते ही मन में आत्मग्लानि उत्पन्न हुई । मन ही मन माँ से बार–बार क्षमा प्रार्थना करने लगा ।

नवद्वीप स्टेशन से हम लोग धर्मशाले में वापस आ गये । यतीश बाबू की लड़कियाँ आज माँ को कृष्णवेश में सजाने वाली हैं, इसलिए माला वगैरह लेकर नाव पर आयी थीं । लेकिन इस गण्डगोल के कारण यह कार्यक्रम नहीं हो सका । हम लोग चुपचाप धर्मशाले में आ गये। सोचा, अब रात तीन बजे वाली गाड़ी से कलकत्ता जाऊँगा । शची बाबू, त्रिगुणा बाबू और ब्रजेन बाबू भी इसी गाड़ी से कलकत्ता जानेवाले हैं । श्री श्री माँ ने धर्मशाला पहुँच कर अपनी परिधेय धोती मेरी पत्नी को पहनने के लिए दिया ।

आज भी माँ की आरती हुई । यतीश बाबू की लड़कियों ने आरती की । त्रिगुणा बाबू ने आरती–गायन किया । यह सब सुनने में अच्छा लगा ।

श्री श्री माँ की लीला–कथा

आरती समाप्त होने के बाद माँ तरह–तरह की बातें कहने लगीं। माँ ने कहा – "एक बार मैंने यह नियम बनाया था कि कोई मुझे आहार कराते समय हँस नहीं सकेगा । खुकुनी खिलाते समय अपनी हँसी रोकने के लिए बराबर प्रयत्न करती रही । लेकिन अन्त तक हँस पड़ती थी। अन्त में नन्दू काफी प्रयत्न करके अपनी हँसी रोककर मुझे खिला सका था।"

मैं–माँ, शायद तुम कभी एक छोटी डिबिया में चावल उबालकर खाती थी ?

माँ–''हाँ, एक बार हम लोग काशी गये थे । वहाँ दुकान पर सामान खरीदते समय एक बैगुना खरीदा था । उससे छोटा बैगुना वहाँ नहीं था । एक डिबिया भी खरीदी । उससे भी छोटी । ढाका में आकर भोलानाथ का भोजन उसे बैगुना में बनता था । मैंने कहा कि उस डिबिया में जितने चावल आ सके, उतना ही उबाल कर मुझे दिया जाय । यही होने लगा । उस डिबिया में चावल के कई दाने रखकर भोलानाथ का चावल जिसमें पकता था, उसमें फेंक दिया जाता था । वही खाती थी । तुम लोगों की दीदी माँ उस डिबिया में चावल के साथ–साथ नाना प्रकार के अनाज कूटकर भर देती थीं । चावल के साथ वह सब भी उबल जाता था ।''

इतना कहकर माँ हँसने लगी । माँ का लड़की के प्रति कितना स्नेह है, इसे समझाने के लिए माँ ने दीदी माँ के इस कार्य का उल्लेख किया ।

समाधि के लक्षण

अब सेवादासी की चर्चा हुई । सवेरे कीर्तन के समय उन्हें भावविभोर हो गिरते देखकर हम लोगों ने समझा था कि यह समाधि का लक्षण है ।

माँ ने कहा–''वह समाधि नहीं थी । उसे भावावेश कहा जा सकता है । भाव का आघात सह्य न कर पाने के कारण बेहोशी आ गयी, बस यही । तुम लोगों को उस समय दिखाया कि उसके दोनों हाथों की मुट्ठियाँ कसी हुई थीं । समाधि में हाथ–पैर उस तरह कड़ें नहीं होते । उस समय हाथ–पैर टटोलने पर ऐसा लगता है जैसे लकड़ी के हाथ–पैर हैं । उनके हाथ–पैर जिस तरह सख्त हो गये थे, वह जान–बूझकर एक भाव को जबरन पकड़ने की कोशिश हो सकती है।

जिस वक्त माताजी (सेवादासी) भावावेश में थीं तब मैंने उसकी आंखों को उलटकर अवस्था को देखा था । जब उलटकर देखा तो पलक उठाने के साथ ही साथ आँख की मणि भी हट गयी । उसे देखने पर ऐसा लगेगा जैसे पत्थर की आँख लगा दी गयी है ।''

मैं–माँ, क्या इसे जड़ समाधि कहा जा सकता है ?

माँ–नहीं । इसे कोई भी समाधि नहीं कहा जा सकता । सिर्फ भावावेश कहा जा सकता है । जड़ समाधि कैसी होती है जानते हो? जड़ समाधि उस अवस्था को कहते हैं जब जागतिक भावों से सम्बन्ध विच्छिन्न हो गया हो, शरीर की दो–एक ग्रन्थियाँ खुल गयी हों, पर सभी ग्रन्थियां न खुलने के कारण आध्यात्मिक जगत् के साथ किसी प्रकार से सम्बन्ध स्थापित नहीं हो पा रहा है । ऐसी स्थिति में वह आध्यात्मिक जगत् का कोई भी समाचार नहीं दे सकता । इस अवस्था में अनेक लोगों का शरीरपात होता है । भीतर अगर बीज है तो इस अवस्था से भी ऊर्ध्वगति प्राप्त हो सकती है ।

मैं–हृदय की दो–एक ग्रन्धि छिन्न हो गयी है, इसलिए इसे समाधि कहा जा सकता है ।

माँ–हाँ ।

हरकुमार की भविष्यवाणी

बातचीत के सिलसिले में माँ के प्रथम भक्त हरकुमार की चर्चा चल पड़ी । माँ ने कहा–हरकुमार ही पहला व्यक्ति था जिसने मुझे 'माँ' कहकर पुकारा था । भोलानाथ उसे बच्चे की तरह प्यार करते थे । लेकिन मैं उसके साथ बात नहीं करती थी । वह दोनों समय आता, मुझे प्रणाम करता और मुझसे पानी मांगता । प्यास लगी है, इसलिए नहीं पानी मांगता था । मेरे हाथ से पानी पीने की उसमें आदत थी। उसका कहना था कि किसी के हाथ से पानी पीने पर यह समझ में आ जाता है कि व्यक्ति सत्त्व, रजः या तमोगुण वाला है । एक बार

उसके घर जाकर कुछ दिनों तक थी । मेरी आवश्यकता को जानने के लिए वह सर्वदा उद्ग्रीव रहता था । चूँकि मैं उससे बातचीत नहीं करती थी, फिर भी मेरी सारी जरूरतें वह पूरी कर देता था । फलतः लोक ईर्ष्या करते थे । मैं उसके साथे बाते करूँ इसके लिए प्रयत्न करता था । लेकिन भोलानाथ से स्पष्ट आदेश न पाने के कारण मैं उसके प्रयत्न करने पर भी संभाषण नहीं करती थी ।

एक दिन बड़े दुःख के साथ उसने कहा–"बेटी, इतने दिन तेरी सेवा न कर किसी पाषाण की करता तो उससे बातें उगलवा लेता। बेटी, तू पाषाण से अधिक पाषाण है ।"

बाद में जब भोलानाथ ने कहा कि उससे बातें किया करो तब बातें करने लगी । इसके बाद उसकी नौकरी अन्यत्र लग गयी ।

जाने के पहले मुझसे कहता गया–"बेटी, तुझे कोई पहचान नहीं सका । एक दिन वह भी आयेगा जब तुझे सब माँ कहकर पुकारेंगे।"

"हरकुमार बड़े सुन्दर ढंग से गाता था । उसके उत्साह पर कीर्तन का प्रबन्ध होता था । उस कीर्तन को सुनने पर मुझे भाव होता था। उसके दिमाग में हल्का–सा दोष था । बीच–बीच में नौकरी करने में अक्षम हो जाता था । बाद में तो वह पागल हो गया था । पागलों वाली स्थिति में एक बार वह मुझसे मिलने के लिए वाजितपुर आया था । अपने साथ एक रुद्राक्ष और जाल का तागा ले आया था । मेरे पास रुद्राक्ष और तागा रखते हुए उसने कहा–इस रुद्राक्ष को शोधन कर दो और यह तागा बन्धन का चिह्न है । मुझे बन्धन से मुक्त कर दो ।"

माँ हँसती हुई यह कहानी सुनाती रहीं । उन्होंने हरकुमार के लिए क्या किया या नहीं किया, यह बात नहीं बताई । केवल हरकुमार को पागल बनाकर उसके रुद्राक्ष लाने की बातें बताई । इससे यह समझा जा सकता है कि माँ का यह प्रथम भक्त किस प्रकृति का पागल था। हरकुमार आज जीवित नहीं है । रहने पर वे देख पाते कि उनकी भविष्यवाणी सफल हुई है ।

अवतार और उनके पार्षद

त्रिगुणा बाबू ने प्रश्न किया–"माँ, अवतार जब जन्म ग्रहण करते हैं तब अपने सभी पार्षदों को साथ लाते हैं । ये सभी उच्च स्तर के व्यक्ति हैं और अवतार की लीला में सहायक बनकर आते हैं । लेकिन देखा गया है कि सभी लोग सम्यक् रूप से लीला समझ नहीं पाते । श्री गौरांग देव के साथ जो लोग आये थे, उनमें से एक व्यक्ति से श्रीकृष्ण लीला के सम्बन्ध में जब प्रश्न किया गया तब उन्होंने कहा था कि उस लीला के बारे में उन्हें कोई जानकारी नहीं है । इस बारे में रामानन्द राय से प्रश्न करें, क्योंकि श्रीकृष्ण लीला को समझने और समझाने के एकमात्र वही अधिकारी हैं । ऐसा क्यों होता है ?"

माँ–अवतार अपने साथ पार्षद लेकर आते हैं, यह बात सत्य है । अपने भिन्न–भिन्न कार्यों में सहायता देने के लिए भिन्न–भिन्न स्तर से उन्हें वे ले आते हैं । एक ही स्तर से वे नहीं आते । इसीलिए सभी भक्त एक ही रूप में उस लीला को अनुभव नहीं कर पाते । अधिकारी भेद के अनुसार भिन्न–भिन्नरूपों में लीला का आस्वादन करते हैं ।

नीतीश बाबू–हम लोग भी तो माँ के पार्षद हैं ।

सभी लोग हँस पड़े ।

श्री श्री माँ की आत्मकथा
शरीर पर विभिन्न योग क्रियाएँ

इसके बाद विमला माँ की चर्चा हुई । निर्मला माँ की तरह वे भी आनन्द भाई से तरह–तरह की बाधाएँ पाती रही ।

इतना बताने के बाद श्री श्री माँ अपनी अवस्था का वर्णन करने लगीं–"मुझ पर भी भोलानाथ की सतर्क दृष्टि थी । जिन दिनों वे परदेश में थे, उन दिनों विद्याकूट में रहते हुए मैं कहाँ जाती हूँ, क्या करती

हूँ, यह सब जानने के लिए उन्होनें गुप्तचर नियुक्त किया था । लेकिन मैंने कभी भोलानाथ की अवज्ञा नहीं की । कौड़ी खेलना मुझे अच्छा लगता था । लेकिन भोलानाथ ने ज्योंही कौड़ी खेलने को मना किया, मैंने बन्द कर दिया । इच्छा होने पर मैं खेल तो जरूर सकती थी और भोलानाथ को मालूम भी न होता, पर मैंने कभी ऐसा नहीं किया। इसके लिए मेरी समवयस्का हमेशा मजाक उड़ाया करती थीं । मैं भी उनके मजाक में भाग लेती, पर उनकी उपेक्षा कभी नहीं की ।''

''चूँकि मैं हमेशा भोलानाथ के आदेशों का पालन करती, पर भाव के समय सब गड़बड़ा जाता था । उस समय जो कुछ होना होता, हो जाया करता था । घर से अगर बाहर निकलना हुआ तो कोई न कोई सुयोग देखकर बाहर निकल पड़ती थी । दरवाजे में सांकल चढ़ाकर बन्द कर देने पर भी कमरे में इस तरह लोटती–पोटती कि मजबूर होकर दरवाजा खोल देना पड़ता था ।

''अष्टग्राम से ऐसा भाव प्रारम्भ हुआ था । आटपाढ़ा, वाजितपुर आदि स्थानों में इसी प्रकार चलता रहा । नाना प्रकार की अलौकिक क्रियाएँ होती रहीं । आसन में बैठी हूँ, आसन सहित लट्टू की तरह भन–भन कर घूम रही हूँ । यह सब इच्छा से नहीं किया जा सकता। जब यह सब क्रिया होती तब भोलानाथ बाधा नहीं देते थे । वाजितपुर में एक बार कीर्तन के समय मैं सभी के सामने भावावेश में आ गयी थी । उसी समय से मेरी काफी बदनामी हुई, लोगों ने प्रचार किया– 'अमुक बाबू की पत्नी गले में ढोल डालकर कीर्तन करती रही ।' इस घटना के बाद से कीर्तन के समय भोलानाथ मुझे कमरे में बन्द करके रखते थे । लेकिन बन्द करने से क्या होता है ? घर के भीतर ही मैं इतना उलटती–पलटती रही कि हाथ की शंख–चूड़ियाँ टूट जाती थीं । सारा शरीर कांपता था । कोई कार्य नहीं कर पाती थी । शरीर की मांसपेशियां मानो ढीली पड़ जाती थीं । आखिर में लस्तपस्त होकर पड़ी रहती ।

"जिन दिनों मेरे शरीर की यह हालत हो रही थी और मेरी बदनामी फैल रही थी, ठीक इन्हीं दिनों भूदेव बाबू की पत्नी एक दिन मेरे घर आकर मुझे उपदेश देने लगीं । उन्होंने कहा–'ऐसा करने (कीर्तन में भाव–विभोर होना) से क्या लाभ ? इससे केवल बदनामी होती है।' आदि ।"

मैंने उनसे कहा–"मैं तो कुछ नहीं जानती । जो कुछ होता है, वह मैं अपनी इच्छा से नहीं करती ।"

"वास्तविक भावावेश में जो कार्य होता है वह किसी की इच्छा से नहीं होता । वह अपने–आप हो जाता है । घर में बैठी हूँ, जब घर से बाहर निकलने की स्थिति होती तब हवा में जिस प्रकार पंख उड़ता है, उसी प्रकार यह शरीर घर से बाहर निकल जाता है । शरीर हल्के भाव से ऊपर उठ जाता था । कभी एक पैर के अंगूठे के सहारे नृत्य करती थी । दूसरा पैर टेढ़ा हो जाता था । शरीर कभी शून्य में उठ जाता था । सूई का अगला हिस्सा जिस प्रकार जमीन स्पर्श करता है, उसी प्रकार शरीर जमीन स्पर्श करता था । पाँच महीने तक आसन–मुद्रा होती रही । इस बीच गृह–कार्य भी करती रही । वाजितपुर में यह सब होता रहा । लेकिन वहाँ घर के सभी कार्य मशीन की तरह करती थी । खाना–पीना गुरु की इच्छा से करती थी । स्वाद–बोध नहीं होता था । इन दिनों प्रकट करने या छिपाने का कोई झंझट नहीं था। यह भाव गुरु पर निर्भर रहने से आता है।"

"मैंने जिन अवस्थाओं की चर्चा की, इससे विशेष शिक्षा यह ली जा सकती है कि गुरु पर सर्वतोभाव से आत्मसमर्पण कर देना चाहिए । अपने को उनके हाथ का खिलौना समझना चाहिए । किसी भी अवस्था के लिए प्रस्तुत नहीं रहना चाहिए । जो कुछ होना है,

वह गुरु की इच्छा से अपने–आप हो जायगा । कोई उसमें बाधा नहीं दे सकता । साधारण लोगों को इस प्रकार निर्भर अभ्यास करने में पहले–पहल कष्ट होता है, बन्धन की ज्वाला अनुभव करना पड़ता है। चूँकि मुझे यह सब यन्त्रणा ज्वाला नहीं सहनी पड़ी ।''

''मेरे मुख से अक्सर स्तोत्र निकलता था । ये स्तोत्र बातचीत करने की तरह उच्चारित नहीं होता था । वह भीतर से आता था। वह अपने आप बाहर होता और अपने आप बन्द हो जाता है । जैसे दरवाजे के पल्ले खुलते–बन्द होते हैं । अधिकतर देखती कि भीतर की ग्रन्थियाँ खुल गयी है और मुँह से अरबी भाषा प्रकट होने लगी। अचानक वह बन्द हो जाती । क्यों बन्द हो गयी, यह देखने के लिए जब पीछे की ओर देखती तो एक व्यक्ति को आते देखती । अगर कुछ देर और कहती रहती तो वह सब सुन लेता । सभी स्तोत्र इसी प्रकार आते और बन्द हो जाते थे । जिसे सुनना चाहिए, केवल वही सुन पाता । प्रणव प्रकट होने पर देवभाषा आती हैं । शरीर की समस्त ग्रन्थियां जब छिन्न हो जाती हैं तभी प्रणव होता है । मुक्त ग्रन्थियों के भीतर से ये स्तोत्र प्रकट होते हैं । इसीलिए स्तोत्र प्रकट होने पर भी बाते स्पष्ट नहीं होतीं । आसनादि में जिस प्रकार शरीर की ग्रन्थियाँ खुल जाती हैं, उसी प्रकार ग्रन्थियों का खुलना आवश्यक है वरना ये सब स्तोत्र प्रकट नहीं होते । मेरे मुँह से केवल संस्कृत स्तोत्र प्रकट होते थे, ऐसी बात नहीं थी । सभी भाषाएँ प्रकट होती थीं । वह इसलिए कि मैं भिन्न–भिन्न देशों के महापुरुषों के साथ उनकी भाषा में ही आलाप करती थी ।''

शची बाबू–माँ, तुम्हारे मुँह से संस्कृत भाषा प्रकट होती थीं, यह मान लिया लेकिन तुम अरबी भाषा कैसे बोलती थीं ?

माँ–प्रत्येक भाषा के भीतर कुछ साधारण बाते हैं । जैसे 'अ' शब्द हमारी भाषा के सभी वर्णों में है । जो लोग शब्द–स्पन्दन की जड़ तक पहुँच गये हैं, उनके लिए भिन्न–भिन्न भाषाओं में बातें करना या भिन्न–भिन्न भाषा को समझ लेना कठिन नहीं हैं । मूल स्पन्दन को जान लेना पर्याप्त है ।

माँ अपने बारे में और भी बहुत–सी बातें कहती रहीं ।

आगे माँ ने कहा–"शाहबाग में जब मेरा अन्नत्याग हो गया था तब अन्न की स्मृति जैसे लोप होती जा रही थी । कुत्ते को भात खाते देख एक बार उसके साथ खाने बैठ गयी थी ।"

सन् १९३२ में माँ जिन दिनों भोलानाथ और ज्योतिष बाबू को लेकर रायपुर (देहरादून) स्थित शिव मंदिर में थीं, उन दिनों भोलानाथ मौन थे । वे मंदिर में बराबर पूजा–जप किया करते थे।

माँ ने कहा–उन दिनों लोग यही सोचा करते थे कि भोलानाथ एक विशिष्ट साधु हैं जो गृहस्थाश्रम त्याग कर चले आये हैं और मैं इन्हें छोड़कर अकेली नहीं रह सकती, इसलिए साथ चली आई हूँ । इसके बाद एक दिन भोलानाथ ने उन लोग को बताया कि मैंने छः महीने तक लगातार अन्न ग्रहण नहीं किया था । इसके बाद लोग मेरे निकट आने लगे ।

नवद्वीप से विदा

इस प्रकार की बातें करते–करते रात के ढाई बजे । हम लोग रवाना होने के लिए तैयार हुए । गाड़ी के आते ही सारा सामान लाद दिया गया । यात्रा के वक्त में माँ को प्रणाम कर दूर जा खड़ा हुआ। जब मेरी पत्नी माँ को प्रणाम करने आयीं तब हम दोनों के

प्रति लक्ष्य करती हुई माँ ने कहा–''आज सबेरे विषाद का भाव देखा था । साथ क्रोध का भाव भी । अब वह दूर हो गया है । इस समय हँसता हुआ चेहरा देख रही हूँ ।''

समझते देर नहीं लगी कि माँ हम लोगों के संकट की कहानी बता रही हैं । मैं मन ही मन मां के प्रति नाराज हुआ था, इसकी चर्चा भी मां ने की । आज सबेरे नाव पर माँ ने हम लोगों से पूछा था कि हम लोग रो चुके हैं या नहीं । जिस समय यह सवाल किया गया था, उस समय हम लोग प्रसन्न मुद्रा में थे । और इस वक्त हम लोगों के हँसते हुए चेहरे को देख रही हैं । यह कैसे सम्भव हुआ? लगता है विदा लेने की वजह से हमारी आकृतियों पर विषाद के चिह्न थे । ऐसी हालत में माँ ने हमारे शरीर पर कैसे हँसना–रोना लक्ष्य किया ? माँ की सभी बातें रहस्यमय हैं ।

जब मेरी पत्नी ने माँ को प्रणाम किया तब मां ने कहा–''तुम सद्‌गुरु की आश्रिता हो । आओ, तुम्हारे शरीर पर हाथ फेर दूँ ।''

इतना कहने के पश्चात् उन्होंने पत्नी के बदन पर हाथ फेर दिया। खुकुनी दीदी ने भी वैसा ही किया । शची बाबू, त्रिगुणा बाबू, ब्रजेन बाबू और मैं एक गाड़ी पर बैठे । महिलाएँ दूसरी गाड़ी में बैठीं ।

स्टेशन आने पर ब्रजेन बाबू टिकट खरीद लाये । आधे घण्टे बाद गाड़ी आ गयी । सभी थर्ड क्लास में सवार हुए । शची बाबू हम लोगों के साथ थर्ड क्लास में सफर करने लगे ।

जब तक गाड़ी पर था तब तक माँ के बारे में बातें होती रहीं। तारापीठ से आसाम जाते समय इस समय इस बार माँ नैहाटी गई थीं । शची बाबू ने नैहाटी जाकर माँ का दर्शन किया था ।

शची बाबू ने कहा–''माँ सभी को धर्मशाले में खाने–पीने का प्रबन्ध करने की आज्ञा देकर घूमने के लिए निकल पड़ी । घूमते–घामते एक सज्जन के यहाँ पहुँच गयीं । उक्त सज्जन का नाम श्रीयुत् क्षितीशचन्द्र गांगुली था । मैमनसिंह जिले के निवासी थे । इन दिनों वे नैहाटी में 'यात्री निवास' स्थापित कर रहे हैं ।

उनके निकट जाकर श्री श्री माँ ने कहा–'पिताजी, क्या तुम मुझे पहचान नहीं सके ?'

माँ को कभी देखा था या नहीं, क्षितीश बाबू स्मरण नहीं कर सके ।

माँ ने कहा–'सोचकर देखो, पहचान पा रहे हो या नहीं । काफी दिनों की बात है, इसलिए स्मरण नहीं कर पा रहे हो ।'

उक्त सज्जन स्मरण नहीं कर पा रहे थे तब माँ ने कहा–'पिताजी, मुझे जरा पानी दो ।'

उक्त सज्जन ने कहा–'खाली पानी दूँ ? बाजार से कुछ मंगवा देता हूँ ।'

इतना कहने के बाद जल्दी से उन्होंने बाजार से फल मँगवाया। उसे एक थाली में काटकर सजाया गया । माँ ने एक छोटी रेकाबी में फल निकाल लेने को कहा । इसके बाद उक्त सज्जन के घर में रहनेवाली एक विधवा से कहा कि ये फल मेरे मुँह में डालती चलो। इस प्रकार फल खाने के बाद माँ धर्मशाले में वापस आ गयीं ।

माँ के चले आने के बाद क्षितीश बाबू को स्मरण हो आया कि पिछली रात को उन्होंने स्वप्न में देखा था जैसे काली माता उनके निकट आई थीं । उन्होंने सोचा कि क्या यही काली माता तो नहीं रहीं? तुरंत स्टेशन दौड़े हुए गये और वहाँ माँ को प्रणाम किया । भावावेग में आकर माँ को काफी बातें सुनाते रहे ।''